शोध सारांश

प्रस्तुत शोध विषय भगतसिंह के क्रांतिकारी जीवन पर आधारित, लिखे गए दो नाटकों (गुरुमुखी और नागरी लिपि में लिखे गए नाटक) पर है। लघु शोध-प्रबंध विषय- *'गगन दमामा बाज्यो' और 'छिपण तों पहलां' नाटकों का तुलनात्मक अध्ययन* में नाटककारों की दृष्टियाँ और उनकी संवेदनाओं को गहराई से समझने की कोशिश की गई है। दोनों नाटकों की विषयवस्तु 'भगतसिंह' के क्रांतिकारी जीवन और उनके उद्देश्यों पर लिखी गई है। जिसकी समीक्षा कर सच्चाई के साथ रचनाकारों ने उजागर करने की कोशिश की है या नहीं, इन सब का विश्लेषण शोध में किया गया है। *'छिपण तों पहलां'* नाटक मूलत: गुरुमुखी लिपि में लिखा गया है जिसका अनुवाद स्वयं कर *'गगन दमामा बज्यों'* से तुलनात्मक अध्ययन कर, दोनों की पृष्ठभूमि और विषयवस्तु में कितना अंतर और कितनी समानता है, इसकी ऐतिहासिक, आलोचनात्मक, मनोवैज्ञानिक, विश्लेषणात्मक और तुलनात्मक समीक्षा की गयी है।

प्रस्तुत शोध विषय को चार अध्याय में विभाजित किया है। पहला अध्याय- तुलनात्मक साहित्य का अर्थ, स्वरूप एवं विस्तार है। जिसके तीन उप-अध्याय हैं। इस अध्याय में तुलनात्मक साहित्य की उत्पत्ति, परिभाषा, स्वरूप, और आज के समय में इसका क्या महत्व हैं, इसके बारे में बताया गया है। दूसरा अध्याय- नाटककारों के व्यक्तित्व और कृतित्व पर आधारित है। इसमें नाटककारों के जीवन के बारे में विस्तार से लिखा गया है। तीसरा अध्याय- हिंदी और पंजाबी नाटक पहचान और परख है। इस अध्याय में हिंदी और पंजाबी नाटकों का प्रारंभ कब से होता हैं, कौन-कौन से नाटककारों ने अपनी भूमिका नाटक के क्षेत्र में अदा की है तथा आज के समय में कौन-कौन से नए नाटककार इस विधा में सक्रिय रूप से काम कर रहे हैं, इसका वर्णन किया गया है। चौथा अध्याय- 'गगन दमामा बाज्यो' और 'छिपण तों पहलां' नाटक का तुलनात्मक अध्ययन है। इस अध्याय के अंतर्गत दोनों नाटकों के नाट्य शिल्प और नाटक के भाव पक्ष की तुलना की गई है। जिसमें नाटक के तत्वों के साथ रंगमंच की दृष्टि को भी ध्यान में रखा गया है। भगत सिंह के जीवन को नाटकीय रूप देकर भी नाटककारों ने उनके जीवन की ऐतिहासिकता के साथ कोई विकृति करने की कोशिश तो नहीं की, इन सब बातों का ध्यान नाटककारों ने कहाँ तक रखा है और किन-किन संवेदनशील मुद्दों को अपने नाटकों में जगह दी है। शोध में ऐसे विषयों का चिंतन कुशलता और दूरदृष्टि के साथ अध्ययन किया गया है।

समकालीन समाज में राजनीति के कारण हो रही उथल-पुथल को दिखाने में नाटक और नाटककार कितना सफल रहे हैं? दोनों नाटकों की दशा और दिशा क्या है? वह वास्तविक समाज को कितनी गहराई से समझाने की ओर प्रयासरत हैं और इसके सामाजिक सरोकार क्या हैं? यह सामाजिक चेतना लाने की ओर प्रयासरत है या नहीं और समाज को कितनी गहराई से प्रस्तुत करने में सफल हो पाएँ है। इन सब विषयों का अध्ययन कर शोध के मूल उद्देश्य को प्राप्त किया गया है।

दोनों नाटककारों के नाटकों और उनकी दृष्टियों में मूलभूत अंतर और विशेषताएँ क्या हैं? नाटककारों की विषय वस्तु, भाषा, शिल्प, शैली आदि में मूलभूत अंतर क्या है और कितना है? उसे पहचानने की कोशिश ही शोध का मूल उद्देश्य रहा है।

दोनों ही नाटककार अपने-अपने तरीके से इन नाटकों के माध्यम से यह बताना चाहते हैं कि आज का वर्तमान परिवेश पूरी तरह से आतंकवाद के माहौल में साँस ले रहा है। सांप्रदायिकता की लपटें जब-जब सिर उठाकर विनाश-लीला करके हजारों लाखों लोगों को जान-माल से रहित कर, इस विषमता को निरंतर बढ़ाती ही रही हैं। आजादी के इतने सालों बाद भी हम इस संघर्ष और द्वंद के परिवेश से पल भर के लिए भी मुक्त नहीं हो पाए हैं। अपितु ये द्वंदात्मक धार्मिक उन्माद तथा आर्थिक परिस्थितियां, सामाजिक और राजनीतिक धरातल पर हमारी जड़ों को खोखला कर रही हैं। गरीबी, भुखमरी, बेरोजगारी की समस्या आज भी हमारे देश में ज्यों की त्यों बनी हुई हैं। आज भी हम जाति, धर्म, क्षेत्र के नाम पर लड़ रहे हैं। देश में शिक्षा, स्वास्थ्य जैसी तमाम सुविधाओं में कटौती की जा रही है। सुरक्षा के नाम पर बेतुका खर्चा किया जा रहा है। इस प्रकार दोनों ही नाटकों में जातिवाद की समस्या, भाईचारे की भावना, समाज व्यवस्था आदि संवेदनशील मुद्दों का चित्रण किया गया है।

आज भी भगतसिंह के विचारों की समाज में आवश्यकता है। इसलिए दोनों ही नाटक वर्तमान व्यवस्था में भी प्रासांगिक हैं। नाटकों में अतीत के माध्यम से वर्तमान को बड़ी सरलता के साथ उकेरने की कोशिश नाटककारों की है।

भगतसिंह अपने समय की धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक आदि परिस्थितियों, समाज और देश से जुड़े सभी मसलों को इतनी गहराई और समझदारी के साथ रखते हैं कि इनके विचारों को देखकर लगता है, असली भगतसिंह क्या थे। भगतसिंह का समय गुलामी का समय था। जहाँ इंसान को इंसान नहीं समझा जा रहा था और भारत का बहुसंख्यक समाज एक ओर अंग्रेजों की गुलामी की मार झेल रहा था, वहीं दूसरी तरफ उससे भी दुर्दांत अवस्था में हिन्दू सभ्यता के अत्याचार से पीड़ित था। जहाँ दलितों, पिछड़ों के साथ जानवरों से भी ज्यादा बुरा व्यवहार किया गया। जातिवादी वर्णव्यवस्था का ऐसा नंगा रूप भगतसिंह की आँखों के सामने था कि उनकी रूह उन्हें आज़ाद कराने के लिए हमेशा बेधती रही। भगतसिंह दलितों, किसानों, पिछड़ों की ऐसी स्थिति के लिए जिम्मेदार सभी सत्ताधारी, धर्म के ठेकेदारों और उनकी फैलाई हुई कहानियों से अच्छी तरह से परिचित थे। अपनी जेल डायरी में सब कुछ लिखा जो समाज के विकास की रुकावट में पूर्णत: बाधक था। अंधविश्वास, रूढ़िवादिता, अवैज्ञानिकता, धार्मिक उन्माद, व्यभिचार, आदर्शवाद, नैतिकता आदि को शोषण का कारण मानते थे। भगतसिंह जहाँ सांस्कृतिक पक्षों को स्वीकार करते थे, वहीं वे मिथकीय तथ्यों को नकारते भी थे। उनका मानना है कि मिथकीय समस्याओं को वैज्ञानिक विचार अपनाकर ही भविष्य की समस्याएँ हल हो सकती हैं।

भगतसिंह के समय का भारत जिसके लिए उन्होंने हँसते-हँसते अपने प्राणों की बलि दे-दी, आज भी वह भारत किस मोड़ पर खड़ा है, वह अपनी स्थिति से कितना ऊपर उठ पाया है इन सब विषयों की ओर नाटककारों ने

नाटकों के माध्यम से देश की प्रशासन व्यवस्था और समाज व्यवस्था पर सवाल उठाए हैं। जिनकी विस्तार से चर्चा शोध विषय में शुरू से लेकर अंत तक की गई है।

शोध का मूल उद्देश्य 'गगन दमामा बज्यो' और 'छिपण तों पहलां' नाटक का ऐतिहासिक दृष्टि से अध्ययन कर उसकी मूल विषय-वस्तु को परखने की ईमानदारी से पूर्ण कोशिश की गई है। नाटककार भगतसिंह के जीवन को नाटकों के माध्यम से कितनी सच्चाई तक उकेरने में सफल हो पाए हैं और किस तरह से भगतसिंह के जीवन को समाज के सामने परोसने की कोशिश की गई है, इन सब बातों का अध्ययन शोध में स्पष्ट रूप से किया गया है।

निष्कर्षतः यह दोनों नाटक भगतसिंह के क्रांतिकारी जीवन को समझाने में सफ़ल हो पाए हैं, इस विषय की निष्पक्षता के साथ जाँच की गई है।